मजदूर-मालिक सम्बन्ध
और
सरकार का
असली चेहरा

बी० टी० रणदिवे
अध्यक्ष, भारतीय ट्रेड यूनियन केन्द्र

नए औद्योगिक सम्बन्ध विधेयक (1978) पर

सी आई टी यू प्रकाशन

मजदूर-मालिक सम्बन्ध और सरकार का असली चेहरा

लोक सभा में 45वें संविधान संशोधन के दौरान औद्योगिक सम्बन्धों पर जो मजदूर वर्ग और ट्रेड यूनियन विरोधी विधेयक पेश किया गया है वह इस बात को खुले रूप में जाहिर करता है कि जनता पार्टी के नेताओं की लोकतंत्र की धारणा क्या है। 45वें संशोधन बिल को इसलिए तैयार किया गया था कि 42वें संशोधन अधिनियम के जरिये आपातकाल को जो एक पक्की बुनियाद दे दी गई थी उसे खत्म किया जा सके। इस ट्रेड यूनियन विरोधी विधेयक में दरअसल ट्रेड यूनियन आन्दोलन से संबंधित आपात-कालीन व्यवस्थाओं और नीतियों पर मुहर लगा दी गई है। आश्चर्य नहीं कि श्री मधु लिमये ने जिन्होंने अभी हाल ही में जनता पार्टी के सचिव पद से त्याग पत्र दिया है इस प्रतिक्रियावादी और धोखा घड़ी भरे विधेयक का, जिसका लोकतंत्र और ट्रेड यूनियन में विश्वास करने वाला कोई भी व्यक्ति समर्थन नहीं कर सकता, बड़ा जोरदार विरोध किया है।

नए विधेयक की हमारी पार्टी के संसद सदस्यों ने, फारवर्ड ब्लाक और कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों ने और जनता पार्टी के कुछ संसद सदस्यों ने यह कह कर भर्त्सना की है कि यह प्रतिक्रियावादी कानून है और यह बात बिल्कुल ठीक है। समूचे ट्रेड यूनियन आंदोलन नेजि समें सीटू, एटक, बी० एम० एस०, एच० एम० पी०, एच० एम० एस० और इंटक आते हैं, एक स्वर से इसकी निंदा की है और एक जुट होकर ट्रेड यूनियन आंदोलन ने इसका विरोध किया है। ऐसा हर कानून जो औद्योगिक संबंधों को सुलझाने के इरादे से पेश किया जाए लेकिन जिसमें दो गैरबराबर वर्गों के अस्तित्व को मानने से इन्कार कर दिया जाय, जिनमें से एक को दूसरे के पैसे की ताकत के खिलाफ अपनी जीविका के लिए लड़ना होता है, वह दलित और शोषित वर्गों के ऊपर एकतरफा बंदिशें लगाता है और शोषण की प्रक्रिया को मदद पहुंचाता है। 'औद्योगिक संबंध' एक वर्गधारणा से शून्य मुहावरा है जिसमें वर्ग संघर्ष के कुरूप यथार्थ को और किसी सच्चे जनतंत्र के इस तकादे को दबाने और छिपाने की कोशिश की जाती है कि वह शोषकों के पंख कतरने के लिए अपनी पूरी ताकत दलित वर्गों के साथ लगा दे।

इसलिए लोकतांत्रिक सरकार यदि यह चाहती है कि उत्पादन निर्विघ्न चलता रहे तो उसका पहला काम यह है कि कानूनी बंदिशें लगा कर वह इस बात का पक्का इंतजाम करे जिसमें लोगों को कम से कम अपनी जरूरत के मुताबिक मजदूरी मिल सके, मजदूरों को साफ सुथरे मकान और जिन्दगी के बेहतर हालात पैदा किए जा सकें, और उन्हें मनमाने ढंग से काम पर लगाने और हटाने के मालिकों के अधिकारों को खत्म करके या इन पर रोक लगा कर उनकी गुलामों जैसी हैसियत को खत्म किया जा सके।

जनता सरकार ऐसी किसी नीति या दृष्टिकोण में कतई यकीन नहीं रखती हालांकि उसके चुनाव घोषणापत्र में कहा गया था :

'जनता पार्टी का विश्वास है कि आर्थिक नीतियां खेती और उद्योग के क्षेत्रों के मजदूरों के हितों को तरजीह देने वाली होनी चाहिए। पार्टी सभी श्रेणियों के मजदूरों के लिए अल्पतम वेतन की पक्की व्यवस्था करेगी। यह अल्पतम वेतन मजदूर और उसके परिवार के गुजारे के लिए पर्याप्त होना चाहिए।' आगे कहा गया था, 'मजदूरी और मूल्य-नीति में इस बात की पक्की व्यवस्था होनी चाहिए कि आमदनी के बीच की खाइयां कम की जा सकें। इस बात के लिए कदम उठाये जायेंगे कि अल्पतम वेतन में तेजी से वृद्धि लाई जा सके ताकि अल्पतम और अधिकतम आय के बीच के अंतर को घटाकर 1:20 पर लाया जा सके। यह आय के नये सिरे से वितरण की नीति द्वारा जो निचले स्तर को ऊपर उठाएगी और अनुपातहीन आय को हतोत्साहित करेगी एक दशक के भीतर इस अन्तर को 1:10 तक फिर घटाने की पूरी कोशिश करेगी।'

वायदा खिलाफी

औद्योगिक शांति को बनाए रखने, उत्पादन को निर्विघ्न चलते रहने देने और उत्पादन में मजदूरों की दिलचस्पी को बढ़ाने के ख्याल से यह एक सही नीति है।

लेकिन इसकी बजाय जनता पार्टी अपनी पूर्ववर्ती कांग्रेस पार्टी की तरह और दूसरे देशों की सभी पूंजीपति-जमींदार पार्टियों की तरह जोर जबरदस्ती से औद्योगिक शांति को बनाए रखने की कोशिश कर रही है ताकि मालिकों द्वारा शोषण, लूटपाट जारी रह सके। जरूरत के मुताबिक मजदूरी का कानून बनाने की जगह यह सरकार एक ऐसा कानून बना रही है जिससे मजदूरों की हड़तालों पर रोक लगाई जा सके, जरूरत के अनुसार

वेतन और जीवन की सुविधाओं के लिए उनके संघर्ष को दबाया जा सके। यह कानून चुनाव घोषणापत्र में किए गए वायदों से मुकरना है। आज जनता सरकार के उच्च नेता इस घोषणापत्र को एक रद्दी के कागज से अधिक नहीं मानते। जब हम कुछ पुराने ट्रेड यूनियन नेताओं के कारनामों को देखते हैं जो आज कबीना मंत्री के रूप में काम कर रहे हैं, तो हमारा सिर चकराने लगता है और उबकाई सी आने लगती है। तब श्री वी० वी० गिरि की उस सम्मानजनक भूमिका की याद आती है जिन्होंने उस समय नेहरू मंत्रिमण्डल में श्रम मन्त्री के पद से त्याग पत्र दे दिया था जब प्रधानमंत्री ने बैंक कर्मचारियों के पक्ष में जाने वाले एक फैसले में छेड़छाड़ की थी।

आधुनिक श्रम कानूनों की सबसे बड़ी ठगी यह है कि इनमें मजदूरों और पूंजीपतियों को बराबरी के दर्जे पर रखने का दिखावा किया जाता है और सरकार को एक तीसरी स्वतंत्र शक्ति के रूप में पेश किया जाता है। जनता सरकार के इस कानून में भी यही ठगी देखने को मिलती है। अगर सिर्फ हड़तालों पर बंदिशे और रोक लगाई जाय तो भंडाफोड़ हो जाएगा, इसलिए तालाबन्दी पर भी बंदिश और रोक लगाने के लिए लम्बे चौड़े प्रावधान दिए गए है। लेकिन हर मजदूर जानता है कि अमली तौर पर तालाबंदी पर रोक नहीं लगाई गई है, बल्कि उसकी मंजूरी दी गई हैं, जबकि हड़तालों की पूरी मनाही। अपने अस्तित्व के लिए अपनी अल्पतम मांगों के लिए जूझने वाले त्रस्त मजदूर और हजारों लोगों को एक ही तालाबंदी से उत्पीड़ित करने वाले मुनाफाखोर पूंजीपति को एक ही तराजू से तौला जा रहा है।

जिसे गैर कानूनी हड़ताल बताया गया है उस पर अगर कोई मजदूर उतरता हैं तो उसे जेल की सजा खानी पड़ सकती है जो 3 माह तक हो सकती है। एक मालिक जो गैर कानूनी ढंग से तालाबंदी करके हजारों लोगों को भूखा मार सकता है और इस तरह उन्हें भुका सकता है उसे भी अधिक से अधिक 3 माह की जेल की सजा होगी। अब आप और क्या चाहते हैं ? क्या जनता सरकार निष्पक्ष नहीं है? क्या यह मजदूरों मालिकों के बीच संतुलन नहीं रख रही है ? श्रम विभाग जबाब दे सकता है कि जहां मजदूर को सिर्फ 100 रुपए का जुर्माना हो सकता है वहां बेचारे मालिक को 2000 रु० तक का जुर्माना भुगतना पड़ सकता है। क्या इतना काफी नहीं हैं ?

नये कानून का लक्ष्य दिखाने को तो एक ऐसा कानूनी ढांचा तैयार करना है जिसमें 'औद्योगिक प्रतिष्ठानों में सौहार्द और शांति बढ़े, मजदूरों के जायज

अधिकार और उद्योगों के (यहां उद्योगों की जगह पूंजीपतियों पढ़ा जाना चाहिए) जायज हितों की रक्षा होगी, जिससे औद्योगिक सामंजस्य एवं सहयोग से उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि होगी, सामानों और सेवाओं की आवा जाही बढ़ेगी और इसके परिणाम स्वरूप जनता के जीवन स्तर में तथा सामाजिक न्याय में खासी उन्नति होगी।' उद्देश्य बहुत सराहनीय है। इसे हासिल कैसे किया जाय ? इसे गुजारे की अल्पतम स्थिति के लिए कानून बनाकर पर साथ ही बहुसंख्य मजदूरों की हड़तालों पर सीधे रोक लगाकर और उन्हें अनिवार्य पंच फैसले का गुलाम बनाकर और उनकी किस्मत को नौकरशाहीं और खुशामदी जजों की मनमर्जी का आश्रय बनाकर कदापि हासिल कहीं किया जा सकता है। यहां उद्देश्यों और कारणों के विवरण से एक उद्धरण देना उचित रहेगा : 'अनिवार्य सेवाओं से जुड़े हुए संस्थानों और उद्यमों तथा दूसरे संस्थानों और उद्यमों में एक स्पष्ट फर्क दिया जायेगा। पहली श्रेणी में उठने वाले विवादों को अनिवार्य रूप से पंच निर्णय के सुपुर्द किया जायेगा या यदि द्विपक्षीय बातचीत और समझौता नहीं हो पाया तो उन पर अनिवार्य रूप से पंच फैसला किया जायगा। इसलिए ऐसे मामलों में हड़-ताल या तालाबन्दी के रूप में काम रोकने की कोई आवश्यकता नहीं होगी···।'

हड़तालों पर पूरी रोक

इसलिए निम्नलिखित मामलों में हड़तालों की मनाही है :

(1) सशस्त्र सेनाओं का कोई भी संस्थान या उससे सम्बन्धित कोई संस्थान या युद्ध अथवा बाहरी आक्रमण से देश की रक्षा से जुड़ी हुई कोई यूनियन या संस्थान;

(2) कोई रेल सेवा या यात्रियों या माल के वायु, जल या स्थल से यातायात के लिए कोई दूसरी परिवहन सेवा;

(3) अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा प्राधिकरण अधिनियम 1971 के अधीन गठित भारत की अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा प्राधिकरण की कोई सेवा;

(4) किसी प्रमुख बन्दरगाह या डौक में या उसके कार्यचालन से संबंधित कोई सेवा;

(5) किसी औद्योगिक संस्थान या उद्यम का ऐसा कोई खण्ड जिसके चालू रहने पर उसके संस्थान या उद्यम या उसमें काम करने वाले कर्म-चारियों की सुरक्षा निर्भर करती है;

(6) कोई डाक तार या टेलीफोन सेवा;

(7) खाद्यानों की खरीद, वसूली, संग्रह, सप्लाई या वितरण में हुए किसी सार्वजनिक उद्यम में या उससे सम्बंधित कोई सेवा;

(8) कोई ऐसा उद्योग जो कि आमतौर पर जनता को प्रत्यक्ष रूप या परोक्षरूप से बिजली, रोशनी या पानी मुहैया करता हो, इनका वितरण करता हो;

(9) सार्वजनिक सफाई या अरोग्य की कोई प्रणाली;

(10) बैंक सेवा;

(11) सभी परमाणु ऊर्जा संस्थान जिसमें बिजली घर भी शामिल हैं;

(12) कोयले का उत्पादन, सप्लाई और वितरण।

व्यावहारिक रूप में बहुसंख्यक भारतीय मजदूरों को उसी तरह हड़ताल करने के अधिकार से वंचित कर दिया गया हैं जैसे आपातकाल में। इससे पहले किसी सरकार की यह हिम्मत नहीं हुयी थी कि वह सामान्य कानून में उद्योगों में हड़ताल पर पूरी रोक लगाने की इतनी बड़ी सूची लेकर सामने आए। पहले की किसी सरकार ने बैंक उद्योग पर इसे लागू नहीं किया था। लेकिन श्री मोरारजी देसाई के नेतृत्व में चल रही जनता सरकार जो 45वें संशोधन विधेयक के सिलसिले में जनता के बुनियादी अधिकारों की लाख दुहाई देती है उसने यह शर्मनाक तमगा भी हासिल कर लिया है।

कर्मचारियों को किसी तरह की सुरक्षा नहीं

बात इस विधेयक तक समाप्त नहीं हो जाती। विधेयक की धारा 157 ने उपयुक्त सरकार को यह अधिकार भी दिया है कि वह अनिवार्य सेवाओं की सूची में नए उद्योगों को रखकर उन्हें भी उन उद्योगों की सूची में शामिल कर सके जिनमें हड़ताल की मनाही है।

ट्रेड यूनियन आन्दोलन की माँग रही है कि सभी क्षेत्रों के मजदूरों को मनमानी बरखास्तगी, छंटनी, ले-आफ इत्यादि से किसी आम अधिनियम के तहत सुरक्षा प्रदान की जाय। स्वयं सर्वोच्च न्यायालय ने पिछले अधिनियमों में उद्योग का जो संकुचित अर्थ लिया गया था उसे खारिज करते हुए इसे ऐसे सभी क्रियाकलाप के विषय में लागू माना जिनमें मालिक और कर्मचारी का सम्बन्ध रहता हो। विधेयक के रचयिताओं को इस पर ध्यान देना चाहिए था और उन्हें उद्योग की व्यापक परिभाषा करनी चाहिए थी, हालांकि यहां भी उन्होंने कुछ क्रियाकलापों को मन-

माने ढंग से इससे वंचित रखा है। अस्पतालों और शिक्षा केन्द्रों को अर्थात अध्यापकों, प्रोफेसरों और नर्सों को अभी नौकरी के सम्बन्ध में कोई सुरक्षा नहीं मिलने जा रही है। अस्पतालों में किए जाने वाले काम की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए शिक्षण और प्रशिक्षण की संस्थाओं और वैज्ञानिक तथा अनुसंधान संगठनों में औद्योगिक तथा वाणिज्यिक उद्यमों से भिन्न वातावरण बनाए रखने के लिए और धर्मार्थ, सामाजिक, और लोक कल्याणकारी सेवाओं से जुड़े हुए संगठनों की विशेष जरूरतों को पूरा करने के लिए इन संगठनों को इस विधेयक के उपबंधों से पृथक रखा जा रहा है।

प्रोफेसरों, अध्यापकों और दूसरे लोगों से यह उम्मीद की जाती है कि वे गुजारे की अल्पतम शर्तों की किसी गारंटी के बिना भी सादा जीवन उच्च विचार से संतुष्ट रहें। डाक्टर और नर्से मानव करुणा के संदेश का प्रसार करने वाले देवदूत हैं—वे इस बात की फिक्र क्यों करें कि उन्हें कितना पैसा मिलता है, या उनके रहने का कोई ठिकाना है भी या नहीं। जनता सरकार अस्पतालों शिक्षण संस्थाओं आदि को अनिवार्य सेवाओं में रखने और इन में हड़ताल पर रोक लगाने में खीझ अनुभव करती है। इसलिए उसने इन के कर्मचारियों से निपटने के लिए अलग से एक विधेयक पेश किया है। उस किधेयक में शिक्षण संस्थाओं, अस्पतालों आदि में किसी भी हड़ताल पर रोक लगाई गयी है।

खैर सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के अनुसार उद्योग की परिभाषा व्यापक हो गई है और इसमें ऐसा कोई भी व्यवस्थित क्रियाकलाप आता है जो किसी नियोजक (मालिक) और उसके कर्मचारियों के सहयोग से चलता हो (चाहे ऐसे कर्मचारी उस नियोजक द्वारा सीधे भर्ती किए गये हों या किसी एजेंसी के जरिए जिसमें ठेकेदार भी शामिल हैं) और सामानों या सेवाओं के ऐसे उत्पादन, सप्लाई या वितरण से सम्बन्धित हो जो किसी मानवीय इच्छा या अभाव की पूर्ति करते हों (वे ऐसी इच्छाएं या अभाव नहीं हो सकते जिनकी प्रकृति महज आध्यात्मिक या धार्मिक हों)। जरूरी नहीं कि ये क्रियाकलाप लाभ के उद्देश्य से चलते हैं या नहीं।

आमतौर पर इससे मजदूर के बहुत बड़े वर्ग को फायदा होता यदि विधेयक में यह धमकी या हड़तालों पर सचमुच मनाही न जोड़ी गई होती और मजदूरों के सभी विरोध को बेकार न बनाया गया होता।

विधेयक में ले-आफ, छंटनी और बन्द के खिलाफ क्या सुरक्षा दी गई है ? जोरदार लफ्फाजी के बावजूद सुरक्षा कहीं देखने में नहीं आती। ले-आफ, छंटनी और, बन्दों को अब सरकार की मर्जी और रजामन्दी पर निर्भर कर दिया गया है और एक अंधा आदमी भी देख सकता है कि मौजूदा सरकार की हमदर्दी किसके साथ है।

निरंकुश आचरण

ले-आफ के सम्बन्ध में धारा 82 में कहा गया है कि किसी भी कर्मचारी आदि को उसका मालिक सरकार से पहले से इजाजत लिए बिना खाली नहीं बैठा सकता। सरकार की मन्जूरी ले-आफ की अर्जी के देने के 60 दिनों के भीतर आ जानी चाहिए। अगर मंजूरी नहीं आती है तो मालिक यह मान सकता है कि मंजूरी मिल गई और वह ले-आफ करा सकता है।

यही व्यवस्था छंटनी पर भी लागू होती है। कोई भी कर्मचारी जो किसी ऐसे संस्थापन में काम करता है जिसमें 100 से कम आदमी नहीं लगे हुए हैं और जो ऐसे संस्थापन में एक साल से लगातार नौकरी कर रहा है उसे सरकार की मन्जूरी लिए बिना नौकरी से निकाला जा सकता है। सरकार मजदूरों या ट्रेड यूनियनों से मशविरा लेने के लिए बाध्य नहीं है। यह खुद ही इस तरह की मन्जूरी दे सकती है और फिर मालिक कानूनी तौर से हजारों लोगों की छंटनी कर सकता है।

यह सभी व्यवस्थाएं जो कि मालिकों की शक्ति पर अंकुश लगाती हुई मालूम होती हैं वे व्यावहारिक रूप में उनके ले-आफ और छंटनी के अपराधों को सरकारी मन्जूरी और कानूनी वैधता देंगी। यह इस विधेयक का सबसे नापाक हिस्सा है। छंटनी और ले-आफ से मजदूरों का कोई खास सरोकार नहीं। यह सिर्फ सरकार और पूंजीपतियों के बीच मसला है। यह मजदूरों के संघर्ष से निबटने के लिए एक निरकुंश आचरण के सिवा और कुछ नहीं है। यह इस बात की एक मिसाल है कि व्यापक औद्योगिक सम्बन्ध विधेयक के नाम पर ट्रेड यूनियनों के लोकतंत्र और अधिकार को किस तरह बलि चढ़ाया जा रहा है।

ट्रेड यूनियनों को नाकाम बनाने की साजिश

इन नापाक धाराओं के साथ साथ यह व्यवस्था भी की गई है कि जिन लोगों को खाली बैठाया जाएगा, नौकरी से निकाला जाएगा या जिन्हें

बन्द के कारण बाहर निकाल दिया जाएगा उन्हें मुआवजा भी दिया जाएगा।

विधेयक में यह व्यवस्था की गई है कि रोजगार सम्बन्धी मसलों पर या किसी कर्मचारी पर लागू होने वाली काम की शर्तों में इस समय निर्धारित प्रणाली के अनुसार ही परिवर्तन किए जा सकते हैं वर्ना नहीं।

मालिक और मान्यता प्राप्त ट्रेड यूनियन का बातचीत करना जरूरी है। उनकी बातचीत 60 दिन-से ज्यादा समय तक नहीं चल सकती। अगर मसला नहीं सुझलता तो मसला समझौता अधिकारी (Conciliation Officer) के पास चला जाएगा जो इसे निपटाने की कोशिश करेगा। यहाँ भी 60 दिन की ही मियाद रहेगी। अगर समझौता अधिकारी निपटारा नहीं कर पाता तो वह जल्दी से जल्दी अपनी रिपोर्ट उपयुक्त सरकार को भेज देगा जो 60 दिन के भीतर इस बात पर विचार कर लेगी कि इस मसले को श्रम अदालत या न्यायाधिकरण (Tribunal) को भेजना जरूरी है या नहीं।

जांच अदालत अपनी रिपोर्ट 180 दिनों के भीतर पेश करेगी; श्रम-अदालत आम तौर पर अपना फैसला 90 दिन के भीतर और न्यायाधिकरण या राष्ट्रीय आयोग अपना फैसला आमतौर पर 180 दिनों के भीतर दे देगा। वास्तविक समय इससे कहीं अधिक भी हो सकता है। इस तरह यदि कोई जिद्दी मालिक मजदूरों की अत्यंत आवश्यक मांगों को मानने से इंकार कर देता है तो ट्रेड यूनियन आंदोलन को कम से कम पूरे एक साल तक बंद रखना होगा।

जिस दौरान समझौते की कोई कार्यवाही चल रही हो उस समय हर तरह की हड़ताल गैर कानूनी होगी। अगर ऐसी कार्यवाही के खत्म होने के 14 दिन के बाद भी इसकी घोषणा की जाती है तो भी यह गैर कानूनी होगी। अगर मामला किसी मध्यस्थ, श्रम अदालत, न्यायाधिकरण या राष्ट्रीय आयोग के विचाराधीन हो तो उस दौरान हड़ताल गैर कानूनी होगी। यदि कोई हड़ताल इस कार्यवाही के खत्म होने के 60 दिन के बाद की जाती है तो भी यह गैर कानूनी होगी।

इसके अलावा किसी औद्योगिक संस्थान में नियुक्त कोई आदमी करार को तोड़ कर मालिक को हड़ताल करने से 6 हफ्ते पहले लिखित नोटिस दिए बिना और नोटिस देने से 14 दिन के भीतर हड़ताल पर नहीं जा सकता।

यही इस बिल की कूट योजना है। पहले जहां यह सरकार या मालिक को रास आता है वहां मध्यस्थता और इस तरह बातचीत को इतना लम्बा

खींचना जितना खींचा जा सकता है और देर करना और मजदूर वर्ग की कार्यवाही और संगठनों को छिन्न भिन्न करता है। मध्यस्थों या श्रम-अदालतों का फैसला अंतिम चीज है हालांकि मजदूरों को फैसले के बाद हड़-ताल पर जाने से नहीं रोका गया है। लेकिन फिर इसका मतलब यह है कि क्योंकि फैसला मजदूरों के ऊपर लादा गया है इसलिए सरकार की पूरी ताकत हड़ताल को कुचलने के लिए इस्तेमाल में लाई जाएगी।

अभूतपूर्व हमला

इससे पहले की किसी सरकार की हिम्मत नहीं हुई थी कि वह ट्रेड यूनियन आंदोलन पर जबर्दस्ती मध्यस्थता थोपे। सरकारी नौकरियों और न्यायपालिका से नियुक्त किए गए मध्यस्थ निष्पक्ष तो हो ही नहीं सकते और वे मजदूरों की सही मांगों को शायद ही कभी पूरी कर पाएं।

और अन्ततः बिल की धारा 120 द्वारा सरकार को अधिकार दिया गया है कि जब वह स्वयं किसी औद्योगिक विवाद में एक पक्ष हो तो वह यदि यह समझे कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर असर डालने वाले विवादों के विषय में सार्वजनिक हित के आधार पर यदि वह आवश्यक समझे तो किसी पंच फैसले को बदल सकती है। इसका सिर्फ एक ही अर्थ है कि यदि कोई पंच फैसला मजदूर के पक्ष में जाता है तो सरकार उसे बदलने का अधिकार रखती है।

बिल में यह प्रावधान भी किया गया है कि हड़ताल के फैसले में 60 प्रतिशत मजदूरों का समर्थन प्राप्त होना चाहिए। यह मजदूरों के हड़ताल करने के अधिकार पर एक और बन्दिश है। इसका मतलब है कि 59 प्रतिशत मजदूरों के हड़ताल करने के फैसले को अल्पमत द्वारा नकारा जा सकता है। इसके अलावा हड़ताल का नोटिस सिर्फ बातचीत करने वाले एजेन्ट द्वारा अर्थात एक मान्यता प्राप्त यूनियन द्वारा ही दिया जा सकता है। इसका मतलब है कि यदि मजदूरों पर किसी और यूनियन का अधिक प्रभाव है तो भी उसके सीधी कार्रवाई करने पर रोक लगा दी गई है। हड़ताल के अधिकार में यह एक और बाधा है।

इसके अलावा धारा 90 में यह व्यवस्था की गई है कि रजिस्ट्रार को संबंधी मतदान की देख-रेख और अधीक्षण करने का खुला अधिकार होगा और हड़ताल संबंधी मतदान में यदि कोई विवाद उठता है तो उसका फैसला वही करेगा।

ट्रेड यूनियन आंदोलन पर सरकार के नियंत्रण के लिए रजिस्ट्रार को हड़ताल के मतदान में घुसाना एक और धौंसबाजी है। रजिस्ट्रार की इस शक्ति का प्रयोग बेईमान अफसरों द्वारा मतदान के फैसले को गलत ठहराने के लिए किया जायगा।

धारा 77 द्वारा सरकार को फिर यह शक्ति दी गई है कि वह जहां सार्वजनिक हित में ऐसा करना मुनासिब समझे वहां किसी उद्योग में विवाद खड़ा होने पर हड़ताल की मनाही कर सकती है।

साफ जाहिर है कि सिर्फ अत्यावश्यक सेवाओं में ही हड़ताल पर रोक नहीं लगाई गई है, बल्कि असल में दूसरी अनेक व्यवस्थाओं के जरिए दूसरे उद्योगों से भी खत्म करने की कोशिश की जा रही है।

जब मजदूर वर्ग को उसके प्रभावशाली हथियार से ही वंचित कर दिया गया है तो फिर किसी जिद्दी व्यवस्थापन को समझौते पर राजी करने की क्या उम्मीद रह जाती है। एक तरफा ढंग से कार्य की शर्तों को बदलने और बातचीत द्वारा समझौते के लिए मजबूर होने आदि के विषय में मालिकों पर जो पाबंदिया लगाई गई हैं, उनसे मजदूरों की मोल-भाव करने की क्षमता दर असल बढ़ेगी ही नहीं। एक बार सीधी कार्रवाई का डर दूर हो जाने के बाद समझौते और मध्यस्थता की कार्रवाइयां महज फर्ज अदायगी बन कर रह जाएंगी और मालिकों के हमलों पर कम-से-कम कुछ महीनों तक कुछ भी नहीं किया जा सकेगा।

विधेयक में ऐसे कर्मचारी पर जो "गैर कानूनी हड़ताल" शुरू करता है तीन महीने की जेल की सजा की व्यवस्था है। मजदूर नेता (विधेयक की भाषा में ऐसा व्यक्ति जो गैर कानूनी हड़ताल के लिए उकसाता है) की सजा छः महीने तक बढ़ाई जा सकती है। यह बदले की भावना से भरी हुई जनता पार्टी का गाँधीवादी लोकतंत्र है।

कहने को तो एक ऐसा मालिक जो कोई गैर कानूनी रद्द-बदल करता है उसे एक साल तक की जेल की सजा हो सकती है। मगर आज तक तो यह करिश्मा देखने में कभी आया नहीं कि किसी मालिक को मजदूरों के खिलाफ गैरकानूनी कार्रवाई के लिए जेल भेजा गया हो। यदि उस पर आरोप साबित भी हो गया तो उसे जुर्माना लेकर छोड़ दिया जाएगा। जो भी हो, एक ऐसी सरकार जो चल्ला पल्ली के राजा के लिए संविधान से बाहर की रियायतें दे सकती है, वह किसी मालिक को जेल में नहीं डालने जाएगी।

मालिकों को कोई नहीं पकड़ेगा

विधेयक में मालिकों और ट्रेड यूनियनों और कर्मचारियों के नाजायज कामों के लिए सजा की व्यवस्था की गई है। मालिकों की बाबत बनाई गई नाजायज कामों की फेहरिश्त खासी लम्बी है और इसमें ट्रेड यूनियन मजदूरों को सताना भी शामिल है। लेकिन बिल की मियाद और मजदूर वर्ग विरोधी रवैये को देखते हुए, यह समझ पाना बहुत आसान है कि इस पर कारगुजारी नहीं होगी और मालिक बड़े मजे से अपना पुराना रवैया जारी रखेंगे और ट्रेड यूनियन मजदूरों को भी खुलकर सताते रहेंगे।

मजदूरों और उनके संगठनों के नाजायज कामों में उत्पादन धीमा करना, मालिकों या मजिस्ट्रेटों के निवास पर प्रदर्शन करना, ओवरटाइम काम करने से इन्कार करना, सदभाव से सामूहिक रूप में बातचीत करने से इन्कार करना, हड़ताल पर न जाने वाले कर्मचारियों या मैनेजमेंट स्टाफ को धमकाना गैर हड़ताली मजदूरों का पिकेटिंग करना, उन्हें काम की जगह में घुसने से जबरदस्ती रोकना आते हैं।

यह हड़ताल के क्रियाकलाप, पिकेटिंग, प्रदर्शन आदि पर रोक लगाने अर्थात हड़ताल को गैरकानूनी करार देने का एक दूसरा तरीका है जिसकी सूची बहुत भयंकर है। इसे इस तरह पेश किया गया है मानो इसके द्वारा कुछ खास तरह के हिंसात्मक और बल प्रयोग की कार्यवाइयों पर आपत्ति उठाई जा रही हो। लेकिन असलियत यह है कि इसका मकसद सामान्य पिकेटिंग आदि पर रोक लगाना और मजदूरों को डराने धमकाने का कसूरवार साबित करना है।

मालिकों को इस बात की छूट होगी कि वे अपनी नाजायज हरकतें करने पर भी बच निकलें जबकि मजदूरों व उनके संगठनों को उनके जायज कार्यवाहियों मे भी रोका जायगा।

अनावश्यक हस्तक्षेप

इतना ही जैसे काफी न हो! विधेयक में ट्रेड यूनियन आन्दोलन की आजादी को तोड़ने की कुछ और कोशिशें की गई। यूनियनों की रजिस्ट्री के लिए गैर जरूरी पाबंदियां और नई शर्तें रखी गई हैं। मौजूदा कानून में सात कर्मचारी कोई यूनियन और इसकी रजिस्ट्री करा सकते हैं। अब रजिस्ट्री के लिए कम-से-कम सौ या दस प्रतिशत मजदूरों की जरूरत होगी। जब इस विधेयक को अधिनियम का रूप दे दिया जाएगा तो 1926 के कानून के तहत

रजिस्टर्ड सभी ट्रेड यूनियनों को फिर से अनिवार्य रूप से रजिस्ट्री करानी होगी। रजिस्ट्रार को दखलअंदाजी करने के भारी अधिकार दिए गए हैं और ट्रेड यूनियनों को ढेर सारे विवरण और दस्तावेज आदि देने को कहा जाएगा और इस तरह उन्हें परेशान किया जाएगा।

विधेयक में यह कहा गया है कि किसी औद्योगिक-संस्थापन में क्रियाशील किसी ट्रेड यूनियन में दो से अधिक ऐसे पदाधिकारी नहीं हो सकते जो उस उद्यम में वास्तव में काम न करते हों। इसमें यह भी कहा गया है कि कोई व्यक्ति चार से अधिक ट्रेड-यूनियनों में पदाधिकारी नहीं रह सकता। चौकस और ईमानदार नेताओं को अनेक यूनियनों की मदद करने के लिए रखा जाता है और यह विधेयक अपने पदाधिकारी चुनने के मजदूरों के अधिकार में अनावश्यक हस्तक्षेप करता है।

प्रसंगवश यह भी याद दिला दें कि इस विधेयक में मालिकों के संगठन को भी मालिकों के ट्रेड यूनियन का नाम दिया गया है जिसके जरिये वे अपनी शोषक भूमिका को सुरक्षित रख सके। इसमें बड़ी चालाकी से ऐसा दिखाया गया है मानों कोई औद्योगिक विवाद पूंजीपतियों और मजदूरों के बीच का विवाद न होकर दो ट्रेड यूनियनों के बीच झगड़ा हो। इससे दर्दनाक बात यह है कि अस्पतालों और शैक्षिक संस्थापनों का इस विधेयक में जहां जिक्र आया है वहां नर्सों, डाक्टरों, प्रोफेसरों और अध्यापकों के संगठनों को ट्रेड यूनियन नहीं कहा गया है, उन्हे संगठन (Association) कहा गया है। टाटा और बिरला को ट्रेड यूनियन बनाने का अधिकार है लेकिन प्रोफेसरों व नर्सों को कोई ऐसा अधिकार नहीं है। उनके सिर्फ अपने संगठन हो सकते हैं।

सैकड़ों पन्नों के इस विधेयक में ढेर सारे पेचीदे खंड हैं फिर भी इस बिल में अपना वकील रखने से रोका गया है। बेवकूफी और जहालत की कोई हद भी है। लगता है विधेयक बनाने वाले यह नहीं चाहते की मजदूर और ट्रेड यूनियन अपने हितों की समुचित रक्षा कर सकें।

यूनियनों की मान्यता

ट्रेड यूनियन आन्दोलन में यूनियनों की मान्यता के लिए उचित और ईमानदार उपबन्धों की मांग की जाती रही है। मालिक और कांग्रेस सरकार इससे पहले इंटक यूनियनों का पक्ष लेते रहे हैं चाहे उनके पीछे बहुत अधिक मजदूर हों या नहीं। इनमें से अनेक यूनियनों ने मजदूर वर्ग विरोधी समझौते

किए और मजदूरों में सलाह मशविरा किए बिना छंटनी और मजदूरों में कटौती स्वीकार की। जिन मजदूरों ने इन समझौतों का विरोध किया वे कानून की चपेट में आ गए क्योंकि कानूनी तौर पर इन मान्यता प्रा यूनियनों द्वारा किए गए समझौते कुछ खास अधिनियमों के अनुसार बाध्यकर ।

इसलिए ट्रेड-यूनियन आंदोलन में इस बात की मांग की जाती रही है कि मान्यता का निर्णय सभी मजदूरों के गुप्त मतदान द्वारा होना चाहिए। त्रिपक्षीय सम्मेलन में इस मांग पर इंटक को छोड़कर समूचे ट्रेड यूनियन आंदोलन ने जोर दिया था। लेकिन जनता सरकार ने इसे ठुकरा दिया। "विधेयक में इस बात की व्यवस्था हो गई है कि बातचीत करने वाली इकाई [मान्यता प्राप्त यूनियन] को उपयुक्त सरकार तय करेगी।.....उपयुक्त सरकार और बातों के साथ ही साथ उस उद्योग में यूनियन-बाजी की स्थिति और कुछ दूसरे मामलों को ध्यान में रखते हुए यह तय करेगी कि यह गुप्त मतदान द्वारा होगा या सदस्यों से पूछताछ करके" बातचीत के लिए अपनी निजी यूनियन चुनने का मजदूरों का अधिकार पूंजीपति-जमींदार सरकार इसके नौकरशाहों की झक और मनमाने फैसले पर निर्भर करेगा। सरकार तथाकथित सत्यापन की प्रक्रिया से किसी भी यूनियन को मजदूरों के ऊपर लाद सकती हैं और इस यूनियन द्वारा किये गये समझौतों को मानने के लिए मजदूर बाध्य होंगे।

सत्यापन का नतीजा अफसरों की मर्जी पर निर्भर है। वे सही-गलत तरीके अपनाते है नतीजे गढ़ बना लेते हैं और शासक-दल के चहेते संगठनों का पक्षपात करने के लिए उन्हें उलट-पलट देते हैं। कांग्रेस के दौर में सचाई का पता इसी तरह लगाया जाता था। जनता सरकार के अन्तर्गत भी यह इसी तरह चलेगा; यही कारण है कि केन्द्रीय ट्रेड यूनियनों ने सत्यापन के जरिये केन्द्रीय ट्रेड यूनियन संगठनों की ताकत का पता लगाने के विषय में श्रम मंत्रालय से सहयोग करने से इंकार कर दिया है।

इस विधेयक के तहत किसी यूनियन को कम से कम 65 प्रतिशत का समर्थन प्राप्त है तो यह बातचीत करने वाली एक मात्र यूनिट (मान्यता प्राप्त यूनियन) होगी। यदि किसी यूनियन को पचास प्रतिशत से अधिक लेकिन 65 प्रतिशत से कम का समर्थन प्राप्त है तो यह बातचीत करने वाली मुख्य यूनिट होगी। जहां बातचीत करने वाली कोई मुख्य यूनिट है और वहां दूसरे ऐसी यूनियनें हैं जिन्हें कम से कम 20 प्रतिशत मजदूरों का समर्थन हासिल है वहां इन दूसरी यूनियनों को सहएकक का दर्जा प्राप्त होगा।

बातचीत करने वाली एक मात्र यूनिट और मुख्य यूनिट को मजदूरों की ओर से बातचीत करने का पर्याप्त अधिकार होगा। इसमें औद्योगिक सत्यापन वित्त और अर्थव्यवस्था के बारे में जानकारी हासिल करने का अधिकार शामिल है।

लेकिन क्या मजदूरों को इन व्यवस्थाओं से कोई लाभ होगा? इन यूनियनों की मान्यता का निर्णय गुप्त मतदान द्वारा नहीं होगा बल्कि नौकर-शाहों द्वारा सत्यापन द्वारा पता लगाकर होगा। मजदूरों के सच्चे प्रतिनिधियों के स्थान पर मालिकों और प्रशासन के चहेतों को मान्यता की सुविधा मिल जायेगी।

जुटकर और डटकर विरोध करो

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि नया औद्योगिक संबंध विधेयक एक प्रतिक्रियावादी प्राधिकारवादी कानून है जिससे पूंजीपतियों को मदद मिलेगी और ट्रेड यूनियनों पर रोक लगेगी। एक ऐसी सरकार जो किसी ऐसे विधेयक की बात तक दिमाग में ला सकती है उस पर यह भरोसा नहीं रखा जा सकता कि वह जनता के लोकतांत्रिक अधिकारों की रक्षा करेगी। जनता सरकार के नेताओं ने बड़ी बेदिली से मीसा को हटाया। उन्होंने संविधान में निरोधक नजरबंदी को बनाए रखा है। उनमें से कुछ को इस बात से तसल्ली ही हुई कि दोनों काँग्रेसों ने मिलकर जनमत-संग्रह और आपातकाल से संबंधित व्यवस्थाओं को हटाने का विरोध किया। और अब इस विधेयक ने उनके लोकतंत्रविरोधी चेहरे को और भी बेनकाब कर दिया है। यह सब निरंकुश ताकतों के हित में ही है।

इस विधेयक को धराशयी करने व कूड़े दान में फेंकने के लिए जनवादी ताकतों को समूचे ट्रेड यूनियन आंदोलन के साथ एक जुट हो जाना चाहिए। सभी केन्द्रीय ट्रेड यूनियन संस्थाओं और उनकी यूनियनों, सभी सजदूरों और कर्मचारियों के संगठनों को ट्रेड यूनियन की स्वतंत्रता व आजादी और उसके हड़ताल के अधिकार पर इस सर्वमुखी हमले के खिलाफ जबरदस्त संघर्ष के लिए एकजुट हो जाना चाहिए। जनता सरकार को ट्रेड यूनियन आंदोलन को बेड़ियों में जकड़ने या मजदूरों को गुलाम बनाने नहीं दिया जाएगा। □

STOP BHEL'S DANGEROUS TRUCK WITH SIEMENS

by

P. RAMAMURTI

General Secretary, C.I.T.U.

An investigative analysis of the process of mortgaging a core public sector undertaking to a West German multinational and of its impact on other industries

A CITU PUBLICATION **PRICE : Rs. 3.00**

Order your Copies from :

Centre of Indian Trade Unions

Central office
6, Talkatora Road
NEW DELHI-110001

नवम्बर, 1978 द्वितीय संस्करण 40 पैसे

एम. के. पंधे द्वारा भारतीय ट्रेड यूनियन केन्द्र के लिए 6, तालकटोरा रोड, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित और प्रोग्रेसिव प्रिटर्स, 1, लारेंस रोड, रामपुरा, दिल्ली-110035 से मुद्रित।